Impact Factor : 1.883 Peer-Reviewed Journal ISSN : 2278 – 5639
Global Online Electronic International Interdisciplinary Research Journal (GOEIIRJ)
{Bi-Monthly} Volume – IV, Issue – V February 2016

हिंदी दलित साहित्य की ऐतिहासिकता
(मध्यकाल के विशेष संदर्भ)

डॉ. भंडारे उद्धव तुकाराम
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
चांगू काना ठाकूर कला, वाणिज्य और विज्ञान
महाविद्यालय,
नवीन पनवेल

उत्तर वैदिक काल के पश्चात बौद्ध धर्म आर्यों , दलितों , शूद्रों के लिए राजस्थान (रेगिस्थान) के तपती धूप में बरसात की शीतल लहर बनकर आया था| बौद्ध धर्म ने आर्यों द्वारा दलितों के शिक्षा के सारे द्वार बंद करके रखे थे वह सभी खोल दिए गये| पूजा-पाठ तथा भक्ति के सर्वाधिकार ब्राम्हणों के पास थे वह भी दलितों में बाँट दिए| जन्म के आधार पर व्यवस्था निश्चित किये गये थे उन्हें भी नकार दिया गया| जिसके कारण मूल निवासियों को बड़ी राहत मिल गई| उनको समाज में प्रतिष्ठा मान , सन्मान , समानता , समता का अधिकार प्राप्त हो गया|

मध्यकाल की प्रमुख भाषा पालि रही , इस काल में उसी पालि भाषा में ब्राम्हणवाद , आर्यों की वर्णव्यवस्था के खिलाफ अपार साहित्य लिखा गया | इस पालि भाषा में रचित साहित्य में 'मनुस्मृति' पर अवलंबित वैदिक आर्यों की चूलें हिलाकर रख दी|

मध्यकाल में सम्राट अशोक ने तो इस वर्ण-व्यवस्था का विरोध करने को विश्वधर्म बना दिया तथा बौद्ध धर्म के विचारों के प्रचारक विश्वभर के देशों में भेज दिये| लेकिन आगे चलकर महाराजा सम्राट अशोक के पोते बृहद्रथ को ब्राहणों का रचा षडयंत्र समझ नहीं आया| इसी षडयंत्र में फसाकर पुष्यमित्र शुंग ने बृहद्रथ को मार डाला| उसने भारत के सभी बौद्ध विहारों को खंडित कर उन विहारों में अहिंसा का प्रबोधन करनेवाले बौद्ध भिक्षुओं को यातनाएँ देना शुरू किया| इसी समय से तथा इसी कारण बौद्ध धर्म का भारत में विनाश प्रारंभ हुआ| अब मूल निवासियों दलित अनार्यों , अछूतों का अब कोई तारण हार नहीं बचा जिसके परिणाम स्वरुप उन्हें अपनी जान बचाने हेतु भारत से पलायन करना पड़ा| उस स्थिति में हिंदू धर्म के द्वार उनके लिए बंद थे , और मुसलमान वे बनना नहीं चाहते थे ऐसी द्विधा परिस्थिति में उन्हें दुबारा से सबसे नीचले तलके रूप में अछूत अपमानजनक जीवन जीने के लिए विवश होना पड़ा|

ऐसी बिकट परिस्थिति में 8 वी सदी से 16 वी सदी तक लगभग 800 वर्षों के दीर्घ कालावधी में बौद्ध धर्म से निकलनेवाले योगी सरहपा सिद्दो तथा नाथ योगियों ने आर्यों द्वारा प्रतिपादित ब्राम्हणवाद की वर्णव्यवस्था को नकारते हुए अपनी वाणी के माध्यम से दोहे तथा साखी द्वारा अछूत अनार्यों , शूद्रों को मरहम लगाने का काम किया| सिद्ध परंपरा के सिद्ध 'सरह' कवियों ने जनभाषा अपभ्रंश को अपनाकर उसमें अपने दोहे लिखना प्रारंभ कर दिया| ताकि उन्हें अपने वास्तविक स्थिति का पता चले| लगभग 84 सिद्धों में से 35 सिद्ध कवि शुद्र अछूत जाति के थे| नाथ सम्प्रदाय की नींव मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ ने रखी जो बहुत बड़े विद्वान थे जो शैव मत को माननेवाले थे| इन सिद्ध कवियों पर बौद्ध धर्म के विचारों का बहुत बड़ा प्रभाव था| सभी के सभी नाथ पंथी योगियों पर बौद्ध धर्म के विचारों का प्रभाव होने के कारण ब्राम्हणों तथा उनकी वर्णाश्रम व्यवस्था के विरोधी| इन 76 नाथों में प्रमुख रूप से आदिनाथ , मत्स्येंद्रनाथ , गोरखनाथ ,जलंधरनाथ , थे जिन्होंने जनभाषा में रचे अपनी रचनाओं के माध्यम से पूजा-पाठ , जाती भेद , मूर्तिपूजा , तथा मंदिर-मस्जिद की आस्था पर प्रहार किया| मध्यकाल में संत कबीरदास ने इस दलित विचारधारा को रूप तथा आकार दिया तथा अपने समकालीन सभी हिंदू-मुस्लिम समाजों को उद्वेलित किया हिंदू और मुसलमानों का उद्वेलन इस कारण नहीं था कि

Impact Factor : 1.883 Peer-Reviewed Journal ISSN : 2278 – 5639
Global Online Electronic International Interdisciplinary Research Journal (GOEIIRJ)
{Bi-Monthly} Volume – IV, Issue – V February 2016

, उन्होंने हिंदू और मुसलमान दोनों धर्म की कुरीतियों पर प्रहार किया तथा पंडित , मुल्ला दोनों को फटकारा बल्कि इस उद्वेलना का प्रमुख कारण था संत कबीरदास ने अपने आप को न तो हिंदू न तथा न की मुसलमान। उन्होंने अपना एक अलग ही पंथ विकसित किया। जिसमें उन्होंने न हिंदुओ के राम को महत्त्व दिया न मुसलमानों के अल्लाह को। इस बात पर वे स्पष्टीकरण देते हुए कहते हैं कि ,

" हिंदू कहों तो हों नहीं ,
मुसलमान भी गारी। "

संत कबीरदास ने कहा कि तुम्हारे दस अवतार हुए , हमें इससे क्या ? वे हमारे किस काम के ? उनमें हमारा तो कोई भी नहीं , उन्होंने ब्रम्हा , विष्णु , महेश के बारे में दलितों को कहा कि , उनके भरोसे मत रहना। उन्हें जब मुक्ति नहीं मिली तो वे तुम्हे क्या मुक्ति देंगे। ऐसे स्वर्ग और नरक की कल्पना रूपी धारणाओं का ही खण्डन किया।

संत कबीरदास ने ऐसी धारणाओं का ही खण्डन किया , जिसे हिंदू भी मानता है और मुसलमान भी। कबीरदास ने ब्राम्हणों की प्रतिष्ठा , मान , सन्मान पर करारा प्रहार करते हुए कहा कि , तुम संसार के गुरु हो सकते हो लेकिन साधु के कदापि गुरु नहीं हो सकते। वे हमेशा कहते है कि, जो उन्हें मैं ऊँचे कुल का हूँ कहकर उनसे दीक्षा माँगते हैं उन्हें देखकर उन्हें हँसी आती है। वे कहते हैं संसार का गुरु होने का दावा करनेवालों ने कभी भी आजतक किसी का भला किया नहीं या भला सोचा नहीं हैं। उन से क्या आगे आपेक्षा की जाय कि वह भला करेंगे।

" ब्रम्हा विष्णु महेसर कहिए इन सिर लागी काई।
इनहि भरोसे मत कोई रहियो , इनहूँ न मुक्ति पाई॥ "

संत कबीरदास ने आगे चलकर कुछ स्थानों पर अपना कविता का रास्ता छोड़कर अकविता की भाषा में डायरेक्ट ब्राम्हणवाद को चैलेंज किया हैं और कहा हैं कि ,

" जो तुम बामन , बमनी जाया ,
तो आन बाट होई का हे न आया॥ "

या

" ऊँचे कुल का जनमियाँ , जो करनी ऊँच न होई।
सीवरण कलश सूरा भरया , साधुन निंदा खोई॥ "

इधर महाराष्ट्र के संत साधु नामदेव ने ब्राम्हणों की उच्चता को चुनौती देते हुए कहा कि ,

" नाना वर्ण गवा उनका एक वर्ण दूध।
तुम कहाँ के ब्राम्हण हम कहाँ के सूद॥"

मध्यकालीन दलित संतों के युग को आध्यात्मिक विद्रोह का युग माना जा सकता हैं। क्योंकि उन्होंने तत्कालीन सभी आध्यात्मिक मूल्यों से विद्रोह किया जिसने मनुष्य-मनुष्य के बिच भेद करते हुए अपना स्वार्थ सिद्ध किया करते थे। संत कबीरदास ,महाराष्ट्र के नामदेव सामाजिक समता के साथ साथ आर्थिक समानता भी चाहते थे।

हिंदी संत कवि रैदास जाति से चमार थे लेकिन उन्होंने अपनी आध्यात्मिक ताकद से तत्कालीन उत्तर प्रदेश के काशी के पण्डितों-पुजारियों , संतों तथा सामंतों को प्रभावित किया। तथा अनार्यों , मूलनिवासियों , अछूतों का स्वाभिमान जागृत किया। संत रैदास ने अपनी रचनाओं के माध्यम से " कह रविदास खलास चमारा।" की उद्घोषणा कर आत्मग्लानि मे डूबी दलित जातियों में अपनी जातियों के प्रति आत्मगौरव की भावना को जगाया। उन्होंने ब्राम्हणों के जातिभिमान को

खण्डित करते हुए कहा कि ,

" रविदास बामन न पूजिए , जऊ होवे गुन हीन |
पूजहि चरण चण्डाल के , जऊ होवे गुन परवीन ||
रविदास जन्म के कारने , होत न कोई नीच |
नर कूँ नीच कर डारि हैं , ओछे करम की कीच ||
ऐसा चाहों राज मैं , जहाँ मिलै बसन औ अन्न |
छोटे - बड़ों सब सम बसै , रैदास रहे प्रसन्न || "

गुरु रविदास के पश्चात गुरु नानक देव से लेकर सिखों के दसवे गुरु गोविंद सिंह सभी ने ब्राम्हणवाद , कर्मकाण्ड तथा मानवीय भेदभाव के खिलाफ वाणी लिखकर संतों की वाणी तथा कार्यों को आगे बढ़ाने में मदत की है | हमें ज्ञात है कि , सिख धर्म की स्थापना ही ब्राम्हणवादी व्यवस्थाओं के विद्रोह स्वरुप हुई थी| इस बात का प्रमाण ही यह है कि , सिखों के पवित्र ग्रंथ 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब ' में लगभग 34 दलित संत कवियों की वाणियों को संकलित किया गया हैं | जिनमें प्रमुख रूप से संत गुरु रविदास एवं संत कबीर साहब की वाणियों को मान , सन्मान दिलाने में सिख गुरु गोविंद दास का बड़ा महान योगदान है | गुरु नानक देव आर्यों ने अपने स्वार्थ हेतु तैयार की गई वर्ण-व्यवस्था , जात- पाँत की नींव को उखाड़ फेंकते हुए कहते हैं कि ,

" नीच अंदर नीच जात नीची हूँ अति नीच |
नानक तिनके संग साथ बडिया सीधु किया रीस|| "

इसी बात को स्पष्ट करते हुए गुरु गोविंद सिंह ने कहा है कि ,

" चार वरण एक वरण कराओ |
पैरी पड़णा जग करवहवा
वाहे गुरु का काम जमाओ ||"

मध्यकाल के समय में सभी संत कवी वैदिक कालीन ब्राम्हणवादी मनोवृत्ति ने अपने स्वार्थ हेतु वर्णाश्रम व्यवस्था की स्थापना की और दलितों के साथ पशु-पक्षियों सा व्यवहार किया इसे समूल रूप से नष्ट करने में अपना जीवन खपा रहे थे तो दूसरी ओर गोस्वामी तुलसीदास ने परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप से उस पर हमला बोलकर ब्राम्हणवाद या उनके वर्णाश्रम व्यवस्था की पुनस्थापना की | तुलसीदास ने अपने ग्रंथ 'रामचरितमानस ' में ब्राम्हण को ऊँचा और पूज्य कहकर असमानता का सामंती मूल्य दोहराना प्रारंभ किया | उन्होंने कहा कि ,

पूजिअ विप्र ग्यान गुण हीना |
शूद्र न गुनगान ग्यान प्रबीना ||"

गोस्वामी तुलसीदास ने कलयुगीन विशेषताओं को गिनाना प्रारंभ किया जो बहुत सारे संतों ने अपनी वाणी के माध्यम से उस पर काला परदा डालने का काम किया था |

सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना ,
मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना |" अथवा
" बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन , हम तुम्ह ते कछु घाटी |

जानहिं ब्रम्हा सो विप्रवर , आँखि देखावहिं डाँटी ||"

संत कबीरदास मध्यकाल में अवतारवाद पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं तो गोस्वामी तुलसीदास अवतारवाद के प्रति शंका जताने वालों पर अपने ग्रंथ 'रामचरित मानस' में प्रहार करते हैं , विरोध करते हैं | अवतारवाद पर पार्वती के मन में शंका उत्पन्न होती हैं तो शिव कहते हैं -

" तुम्ह जो कहा राम कोऊ आना |
जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना ||
कहिहिं सुनहिं अस अधम नर ग्रसे जो मोह पिशाच |
पाषंडी हरिपद विमुख , जानहिं झूठ न साँच ||"

गोस्वामी तुलसीदास का यह वाक् युद्ध वास्तविक रूप से संत कबीरदास के साथ ही था | उनकी उनसे सीधी वैचारिक टक्कर थी| तत्कालीन समाज में गोस्वामी तुलसीदास के माध्यम से हिंदी साहित्य में दुबारा से ब्राम्हणवाद, अवतारवाद , वर्णव्यवस्था का वर्चस्व कायम हो गया | उस समय समाज के आधार के रूप में सामंतवादी व्यवस्था की मजबूत जकड़बंदी के कारण ज्ञानाश्रयी शाखा निर्गुण पंथ भी सगुण अवतारवाद के घेरे में आ ही गया | जिन सामाजिक कुरीतियों , अंधविश्वासों के विरोध में संत कबीरदास , दादू दयाल , गुरु नानक, नामदेव आदि विद्रोह कर रहे थे तथा जिन्होंने तत्कालीन समाज की समय की जो " सभ्यता " की समीक्षा की थी , उसकी अंतोतगत्वा परिणति भी मठों तथा मंदिरों की स्थापना में परिवर्तित होने लगी | उन कवियों को 'भगवान' के अवतार के रूप में बदल देने में हुई |

मध्यकाल की सामाजिक परिस्थितियों की समीक्षा करने के बाद उक्त निष्कर्ष निकलता है तो दलित चिंतन में जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन खपाया ऐसे ओमप्रकाश वाल्मीकि की भी यही धारणा है | उनका मत है कि , " हिंदी साहित्य के मध्यकालीन भक्ति साहित्य मैं रैदास तथा संत कबीरदास एक ओर वर्ण-व्यवस्था , जाती व्यवस्था , वर्णाश्रम व्यवस्था के खिलाफ डटकर खड़े दिखाई देते हैं तथा समाज में बदलाव लाने हेतु संघर्ष करते हैं, जिसमें अपना परिवार, जीवन तक खपाया है , वही पर वे आध्यात्मिक कीचड़ रूपी दलदल में फँसकर उसी सामंती व्यवस्था में विलीन हो जाते हैं| जिस सामंती व्यवस्था ने वर्णव्यवस्था को मजबूती दी है उसी के हो जाते हैं| लेकिन यह भुलाया नहीं जा सकता कि , उनके द्वारा निर्माण क्रांतिकारिता सामाजिक धरातल पर गहन प्रेरणा उत्पन्न करने में सफल होती हैं| वही प्रेरणा हिंदी साहित्य में विरोधी स्वर को ऊँचा करती हैं| वही विरोधी स्वर आज भी प्रासंगिक बनकर 'दलित' चेतना के लिए प्रोत्साहन , प्रेरणा देती है| लेकिन रहस्यवाद , भक्तिवाद , निर्गुणवाद उन्हें उसी परंपरा से जोड़ देते हैं , जिसके खिलाफ दलित साहित्य खड़ा हैं |"

ऐतिहासिक दस्तावेजों के आधार पर दलित संत कवियों का कालखण्ड विक्रम की 15 वीं शताब्दी माना जाता हैं| तथा अँग्रेजी के हिसाब से 14 वीं 15 वीं शताब्दी का काल माना जाता हैं| इन शताब्दियों के उपरांत आनेवाली दो शताब्दीयों में हमें दलित विमर्श का विकास न के बराबर दिखाई देता हैं| हमें इसके पीछे कारण यह दिखाई देता हैं कि , दलित चेतना के विरुद्ध प्रतिक्रांति की धारा इन दो शतकों में बड़ी तेज हो गई | इस प्रबल प्रतिक्रांति के खिलाफ टक्कर लेना दलितों के लिए बड़ा मुश्किल हो गया होगा |

लेकिन इसके बावजूद यह निश्चित रूप से माना जा सकता है कि, दलित चेतना की यह धारा जिसका सूत्रपात महात्मा संत कबीरदास ने किया वह आगे चलकर पूर्ण रूप से सुख गई हो | वास्तविक रूप से यह धारा अलग प्रवृत्ति की थी और परिवर्तनकारी थी | इसकारण संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि , तत्कालीन ब्राम्हण इतिहासकारों ने इस परिवर्तनकारी धारा को उपेक्षित या अनदेखा किया हो| लेकिन संत कबीरदास , रैदास , तथा उनके अन्य साथी कवियों को

Impact Factor : 1.883 Peer-Reviewed Journal ISSN : 2278 – 5639
Global Online Electronic International Interdisciplinary Research Journal (GOEIIRJ)
{Bi-Monthly} Volume – IV, Issue – V February 2016

उपेक्षित करना उतना सरल काम नहीं था क्योंकि वे सभी इतिहास के उद्गाता थे |

परंतु 16 वीं तथा 17 वीं शताब्दी के उपरांत 19 वीं शताब्दी में साहित्य की दलित धारा भारत की सभी भाषाओं में पुनर्जिवित होती दिखाई देती है | इसके पीछे कारण यह था कि , इन दो शताब्दियों तक भारत में अँग्रेजी राज कायम हो चूका था| जिसके कारण भारत में ईसाई मिशनरियों ने अपना अस्तित्व निर्माण कर दिया था| उन्होंने अपने प्रभाव में दलित अछूतों तक शिक्षा का ज्ञानरूपी प्रकाश पहुँचाना प्रारंभ कर दिया था | इस नव जागरण ने भारत की सभी भाषाओं में दलित सृजनकारों ने केवल अपना साहित्य और अपना इतिहास नहीं लिखा बल्कि अपने समय के सभी साहित्यकारों के साहित्य को भी प्रभावित किया| तभी सारी दुनिया को अछूतों का दर्द , यातना , दुःख पता चलने लगा |

सन्दर्भ

१ - ऋग्वेद १०-९०-१२
२ - छंदयोग्य उपनिषद ५-१०-१७
३ - वेदांत १-३-३४
४ - मनुस्मृति १०-१२५
५ - मनुस्मृति ३-२७१
६ - मनुस्मृति ८-२०
८ - कबीर ग्रन्थवाली
९ - वही
१० - वही
११- रैदास
१२- नानक देव
१३- गुरुगोविन्द सिंह
१४ - तुसिदास 'रामचरितमानस '
१५ -तुलसीदास 'रामचरितमानस' उत्तरकाण्ड' दोहा ९९
१६- तुलसीदास 'रामचरितमानस' बालकांड, दोहा ११४
१७- चंचल चौहान, दलित विशेषांक लक्खनऊ नवम्बर २०००, पूर्व. ५७-५८
१८- ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पूर्व. ७३
१९- जोतिबा फुले - गुलामगीरी
२०- जोतिबा फुले - गुलामगीरी प्रस्तावना से
२१- अयप्पा पणिक्कर
२२- केवलानन्द के गीत से
२३- विवेकानंद सुमित सरकार 'आधुनिक भारत के उद्घृत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १९८६, पूर्व. ९६
२४- आर.सी.प्रसाद की कविता हरिजन से
२५- सोहनलाल द्विवेदी
२६ - ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र